मेरी आरजू

आकांक्षा झा

छात्रा – अलायंस विश्वविद्यालय

एक शाम खिड़की पर बैठी ही थी
की मन में एक सवाल आया सीता का
समर्पण देखा था फिर भी न जाने क्यों
द्रौपदी की मर्यादा पर सवाल आया…
फिर एक कहानी बनने का मुझे भी कुछ इस तरह ख्याल आया।
एक शायर है,
जिसकी मैं कल्पना बनना चाहती हूँ...
वास्तविकता में तो कभी कुछ माँगा नही।
पर ख्याली दुनिया में तुम्हारी गज़ल बनना चाहती हूँ !
चाहती हूं, कि जब तुम लिखो मेरे बारे में,
तो मत लिखना जो शायरों की मनगढ़ंत कल्पना का चरित्र है।
तुम लिखना,
कैसे मेरा चलते चलते गिर जाना मुंबई की बारिश जैसे संभव है,
कही भी और कभी भी !
तुम लिखना,
कैसे मैं हर रात अपने आँखों के नीचे इन काले गहरे गड्ढों में खमोशी भरती तो हूँ,
पर हर सुबह चिड़िया सी गाना गाती हूँ और उड़ती हूँ।
तुम लिखना,
कैसे मेरे सूखे फटे होठों के ऊपर का तिल,
बरसात के बाद शाखों के गीले पत्तों सा हो जाता है,
हर क्षण जीभ का स्पर्श पाकर।
और जब लिखना चाहो,
मेरी इन बिखरी ज़ुल्फों के बारे में,

तो लिखना
कैसे ये असामान्य सी बिखरी जुल्फें आरावली और हिमालय में फरक नही पढ़तीं।
तुम ये सब लिख ही रहे होगे,
की तुम्हे याद आएगा कि तुम मुझसे अलग कहां हो?

तुम गंगा किनारे लगे उस वृक्ष की भांति हो,

जो मोक्ष प्राप्त करने आये साधुओं को विश्राम के लिए जगह देता है।

और मैं, प्रकृति के रूप में आदि शक्ति!

जो सृजन का बीज भी रख सकती है,

और काल सी विनाशक भी है।

कभी बताऊँगी तुमको भी,

कि मैं... तुम्हारी ग़ज़ल बनना चाहती हूँ।